Reg No 177/2008-2009 ISSN: 2322–0317

PSSH PERSPECTIVE of SOCIAL SCIENCES and HUMANITIES

An International Multidisciplinary Refereed Research Journal

VOL 2, NO 2

JULY - DECEMBER 201

Biannual

Editor

Dr Hemant Kumar Singh

Assistant Professor

Economics Department

Madan Mohan Malviya PG College

Deoria (UP)

Publisher

Herambh Welfare Society

Varanasi (India)

आधुनिक भारत में दलित चेतना का विकास

डॉ. हरिशंकर प्रसाद[1]

जन्म के आधार पर जब सामाजिक विभाजन होने लगा तो जाति प्रथा का जन्म हुआ। जाति के आते ही ऊँच नीच का भाव और छूआछूत प्रचलित होने लगा। ऐसा प्रतीत होता है कि पेशे की अशुद्धता के कारण शूद्रों के साथ अस्पृश्यता का व्यवहार होने लगा। अशुद्धता एवं प्रदूषण अस्पृश्यता के आचरण का मूल है जो जन्म के साथ जुड़ गयी। जन्म आधारित असमानता जाति आधारित पेशागत निम्न परिस्थितियाँ और अन्त में समाज आधारित अस्पृश्य व्यवस्था इसकी देन है। जाति के आधार पर ऊँच–नीच की सामाजिक विषमता पूर्ण व्यवस्था, क्रमिक असमानता ने उच्च जातियों को विशेष अधिकार और निम्न जातियों पर निर्योग्यताएँ लाद दी।

उनके ऊपर एक अत्याचारी व्यवस्था लाद दी गयी और उनका जीवन अत्यन्त दुखद हो गया। भारतीय समाज में विषमता उस विशाल हिमखण्ड की तरह है जिसका केवल एक छोटा सा हिस्सा ऊपर दिखाई देता है। असमानता पर आधारित इस समाज व्यवस्था की घोर पराकाष्ठा यही थी कि समाज के एक वर्ग को अस्पृश्य बना दिया गया और जीवन के मूल अधिकारों से वंचित किया गया था। इस वर्ग के सदस्यों को उच्च वर्गों के कुँओं, तालाबों, धर्मशालाओं, विद्यालयों आदि का प्रयोग नहीं कर सकते थे। मंदिरों व सामाजिक स्थानों पर उनका प्रवेश निषिद्ध था।

उनके छू जाने पर शुद्धि का विधान था।[1] जाति के लौह ढाँचे के चलते शूद्र भी आपस में विभाजित हो गये और एक दूसरे का न छुआ खाने की चाल हो गयी। जाति के प्रारम्भ से ही विभाजन और शूद्रों पर अत्याचार करना शुरू कर दिया। अछूतों का सामाजिक उत्पीड़न धर्म सम्मत था और इसलिए इसकी जड़े गहरी थी। किसी अन्य विधान में आदमी इतना अधिक अपमानित और दलित नहीं हुआ। इस व्यवस्था में मानव व्यक्तित्व और प्रतिष्ठा के साथ चरम अत्याचार हुआ।[2] अस्पृश्यता गुलामी का अप्रत्यक्ष रूप है। जब सभी एक ईश्वर से सृजित हुए हैं तो कोई अस्पृश्य कैसे हो सकता है। एक ही पैर से जिसकी उत्पत्ति कही जाती है। एक ही शरीर का पैर अस्पृश्य कैसे हो सकता है?

अस्पृश्यता की उत्पत्ति किसी भी प्रकार दैवीय, धार्मिक एवं मानवीय नहीं कही जा सकती है। इसका व्यवहार अस्तित्व को नकारने जैसा है।

[1] प्रवक्ता, माँ खंडवारी पी0जी0 कॉलेज, चहनिया, चन्दौली

अस्पृश्यता व्यवहार में सभी प्रकार के मौलिक अधिकारों का लगभग पूर्णतया इनकार है और इसी तरह सभ्य और उत्तम अस्तित्वों के लक्षण का भी।[3] अस्पृश्य जातियाँ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक निर्योग्यताओं से ग्रस्त थी जो उच्च जातियों द्वारा लादी गयी परम्परा से स्वीकृति प्राप्त थी। इनमें कुछ निर्योग्यताएँ निम्नलिखित हैं–

1. इन्हें शिक्षा से वंचित रखा गया। ये उच्च जाति के बच्चों के साथ स्कूल में नहीं बैठ सकते थे। इन्हें शास्त्र पढ़ने की आज्ञा नहीं थी।
2. इन्हें प्रायः शहर या मुहल्ले में नहीं बल्कि शहर अलग से रहने का प्रबन्ध किया गया। इन बस्तियों की दशा अत्यन्त गंदी एवं खराब होती थी।
3. समाज में सबसे नीचा स्थान होने के कारण केवल सेवा करने का काम दिया गया। इनको छूना तो दूर इनकी परछाई को अशुद्ध माना जाता था।
4. सार्वजनिक स्थानों, कुँआ, तालाब एवं रास्तों का प्रयोग निषिद्ध था।
5. इन्हें पेशे की स्वतंत्रता नहीं थी। इन्हें अपना पुश्तैनी धंधा करने के लिए बाध्य होना पड़ता था।
6. इनसे उच्च जाति वाले लोग बेगारी करवाते थे एवं बहुत कम पारिश्रमिक देते थे।
7. इन्हें मन्दिर में प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी।
8. इनका विवाह संस्कार ब्राह्मण पुरोहित नहीं करवाता था।
9. स्मृतियों के अनुसार इनके अपराध करने पर कठोर दण्ड की व्यवस्था थी।
10. ये भूमि और सम्पत्ति नहीं रख सकते थे।

इन निर्योग्यताओं का प्रभाव इनके जीवन पर ऐसा पड़ा कि ये दीन–हीन एवं अपंग हो गये। अस्पृश्यता के प्रारम्भ होने का वैदिक काल में कोई प्रमाण नहीं मिलता। प्राचीन भारतीय इतिहास के मर्मज्ञ डॉ. शर्मा ने अस्पृश्यता के प्रारम्भ होने के विषय में गहरी छान–बीन की है। उनका कथन है– ''शूद्रों से स्पर्श की मनाही वैदिक काल के अन्त में (1000–600बी.सी.) प्रकट हुई। इसकी पहली सूचना शतपथ ब्राह्मण (11.3.12) में मिलती है। जहाँ एक बढ़ई के स्पर्श को सांसारिक अशुद्धि देने वाला कहा गया है।[4] शूद्र द्वारा स्पर्श किया गया भोजन दूषित हो जाता है और ब्राह्मण द्वारा ग्रहण के योग्य नहीं रह जाता है। यह विचार आपस्तम्ब धर्मसूत्र (500-300 B.C.) में (5.16.21) वर्णित है।[5] अस्पृश्यता पाणिनी के समय में सामने आयी और बाद के कालों में स्थायी बनी और गृप्त काल में इसमें जोर दिया गया।[6] डॉ. अम्बेडकर का मानना है कि वैदिक काल में अस्पृश्यता नहीं थी। धर्मसूत्रों के काल में अशुद्धता थी। लेकिन अस्पृश्यता नहीं थी।[7] अम्बेडकर इसे 400 A.D. के बाद मानते थे।[8] संभवतः अस्पृश्यता पूर्व मौर्य काल के अंत में प्रकट हुई।[9] इनकी उत्पत्ति के विषय में अनेक कारण दिये जाते हैं। धर्म सूत्रों के

अनुसार जातियों के अंर्तमिश्रण से यह उत्पन्न हुई। 'अस्पृश्यता की उत्पत्ति पहले हाइजीन में और तब धर्म में हुई।[10] अंतिम रूप से अपृश्यता का विचार निश्चित पेशों के सैद्धान्तिक अशुद्धता में चिन्हित है।[11]

डॉ. शर्मा का विचार है कि अस्पृश्यता की उत्पत्ति का एक कारण आदिवासी जनजातियों का पिछड़ापन था जो मुख्यतः शिकारी और व्याध थे। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि– ''आदिवासी जातियों को अति निम्न भौतिक संस्कृति की पृष्ठभूमि के विपरीत शारीरिक कार्यों के प्रति बढ़ती घृणा की अभिव्यक्ति जो निश्चित पदार्थों के प्रति अशुद्धता एवं मनाही के प्रारम्भिक किया।[12] प्रारम्भिक पाली ग्रन्थों में पाँच जातियाँ–निषाद चांडाल, वेत्र, रथकार और फुक्कस का उल्लेख है। इन्हें हीन कुल व हीन जाति का बताया गया है। परन्तु धर्म शास्त्रों के द्वारा इनमें सभी के साथ अस्पृश्यता का व्यवहार नहीं होता था। केवल चांडाल और निषाद वैदिक काल के बाद अस्पृश्य माने जाते थे। अस्पृश्य सामूहिक रूप से अन्त्यज अर्थात् गाँव या शहर से बाहर रहने वाले लोगों के रूप में जाने जाते थे।[13] चाण्डाल निषाद इत्यादि मूल रूप से अशुद्ध पेशा करने वाले जनजातियों से चिन्हित होते थे जो पहाड़ों और जंगलों में निवास करती थी, जो स्थायी रहने के स्थानों से बाहर थी। जब ब्राह्मण स्त्री और शूद्र पुरूष के सर्वाधिक घृणास्पद मिलन से कोई पुत्र उत्पन्न होता था।

वह गाँव से बाहर निकाल दिया जाता था और वह घुमन्तु और असभ्य जातियों के साथ बाहर रहने को विवश था जिनके साथ वह एक हो जाता था। अतः धर्मशास्त्रों का वचन है कि ऐसे तिरस्कार करने योग्य मिलन से पैदा हुई संताने चांडाल हो गयी।[14] ऐसा प्रतीत होता है कि जनजातियों के गाँवों की पूरी आबादी ब्राह्मणों द्वारा अस्पृश्यों की स्थिति में दण्डित की गयी।[15] अम्बेडकर ने अस्पृश्यता का निश्चित समय जानने का प्रयास किया। वैदिक काल में अस्पृश्यता नहीं थी। अम्बेडकर का मत है कि मनु के काल में अस्पृश्यता नहीं थी केवल अशुद्धता थी।[16]

यह कितनी अन्यायपूर्ण व्यवस्था थी कि दलित युगों से दीन–हीन स्थिति में पड़े रहने को विवश थे और ऐसी व्यवस्था की गयी कि आने वाले समय में भी वे ऐसे ही बने रहेंगे इस जड़ता से ऊपर उठने की आकांक्षा और मनुष्यों के बीच समानता का अधिकार पाने की इच्छा ने दलित चेतना को जन्म दिया। दलित चेतना दलित और दमनकारी के बीच सम्बन्धों का बुनियादी तत्व हैं। उसकी पीड़ाओं का धनीभूत होना दलित चेतना है और उससे मुक्त होने की आकांक्षा और चेष्टा दलित चेतना का प्रतीक है। इतिहास के प्रत्येक युग में इसमें निहित विषमता के विरुद्ध आन्दोलन एवं विद्रोह हुए हैं। प्राचीन कालों में अस्पृश्यों का उत्पीड़न एवं उनके साथ कटु अमानवीय व्यवहार प्रारम्भ हुआ, मध्य काल में भी उन्हें घेरे से बाहर नहीं निकलने दिया आधुनिक काल जो ब्रिटिश काल है, इसमें दलित सामाजिक रूप से वंचित परन्तु राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हो गये और बाद में इन्हें संवैधानिक प्रमुखता प्राप्त हो गयी। गहरे और गंभीर तर्क दलित चेतना का विकास के कार्य को

आधुनिक काल की चुनौती मानते हैं। जो दलित परिवर्तन और क्रान्ति का प्रतीक है और उनके अस्पृश्यता के उन्मूलन का निवारण भी है।

सन्दर्भ सूची

1. पांथरी, शैलेन्द्र, आधुनिक भारतीय नवजागरण, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, वाराणसी, 1992–93, पृ. 17.
2. देसाई, ए.आर. भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ. 210.
3- Verma, V.P. Untouchability and Mahatma Gandhi, Editor Mishra. D.K., Gandhi and Social Order, Research Publication in Social Sciences, Delhi, p. 11.
4- Sharma, R.S. cited p. 79.
5- Ibid, p. 113.
6- Ibid, p. 283.
7- Kuber W.N., Dr. Ambedkar: A Critical Study, Delhi 1973, p. 40.
8- Ambedkar, B.R. The Untouchable- Who are they and Why Became untouchables, New Delhi, 1948, p. 155.
9- Sharma, R.S. Cited, p. 126.
10- Pillai, G.K. Orgin and Development of Caste, Kutub Mahal, Allahabad, 1959, p. 176.
11- Ghurya, G.S. Cited, p. 159.
12- Sharma R.S. Cited, p. 132.
13- Chatterjee, S.K., The Scheduled Caste in India Gyan Publishing House, New Delhi- 1996, p. 58.
14- Dutt, N.K. Origin and Growth of Caste in India, vol. II, Calcutta, 1968, p. 90-91.
15- Sharma, R.S. Cited, p. 132.
16- Ibid, p. 41.